

देव-शास्त्र-गुरु पूजन

(डॉ. अखिल बंसल कृत)

(दोहा)

तीन लोक के जीव सब, आकुल व्याकुल आज ।

देव-शास्त्र-गुरु शरण लें, सकल सुधारें काज ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठः ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक

मैं तो चहुँगति में भटक चुका, दर्शन को प्रभुवर तरस रहा ।

जिनवर चरणों में जगह मिले, सुख सौम्य जहाँ पर बरस रहा ॥

कर्मोदय से झुलसा स्वामी, शीतलता मुझको मिल जाये ।

अमृत-जल भरलाया गगरी, सिंचित फुलवारी खिल जाये ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मैं पंच पाप में भरमाया, परहित कुछ काम नहीं आया ।

मन वायु वेग-सा चंचल है, जिसको मैं बाँध नहीं पाया ॥

आक्रोश अग्नि के शमन हेतु, चन्दन अर्पण ढिंग लाया हूँ ।

संसार दाह का नाश करो, हे नाथ शरण में आया हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

किंचित् वैभव की चाह नहीं, ना राज-पाट की अभिलाषा ।

रत्नत्रय निधि बस मिल जाये, मन में यह जाग उठी आशा ॥

मैं अक्षय गुण का भण्डारी, फिर भी खुद को न पहिचाना ।

यह अक्षत पुंज समर्पित हैं, जिनको मैंने अपना माना ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विषयों का सेवन भोग किया, मधुरस अधरों से पीता था ।

अगणित पापों का बोझ लिये, सुख की चाहत में जीता था ॥

हे नाथ आपके चरणाम्बुज की, महक व्याप्त है कण-कण में ।

चरणों में सुमन समर्पित हैं, चैतन्य सुरभि है जीवन में ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नाना व्यंजन के भोग किये, पर क्षुधा-रोग नहीं मिट पाता।
ज्यों-ज्यों मैं इसमें लिप्त रहा, त्यों-त्यों ही यह बढ़ता जाता॥
यह व्याधि बड़ी है दुःखदायी, इससे छुटकारा कब पाऊँ।
नैवेद्य समर्पित चरणों में, हे नाथ ! तुम्हारे गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब अगणित दीपों के द्वारा, संसार-तिमिर छँट जाता है।
अज्ञान अँधेरा छँटा नहीं, जो भव-भव भ्रमण कराता है॥
यह दीप सँजोकर लाया हूँ, इसमें प्रकाश भर दो प्रभुवर।
तेरे सदृश बन जाने को, अति व्याकुल हूँ मेरे जिनवर॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अरे भार-सा यह जग सारा, आत्मग्लानि जो उपजाए।
ले हाथों में धूप सुगंधित, नभ मण्डल नित महकाये॥
कब धन्य सुअवसर मुझे मिले, जब मुक्तिरमा का वरण करूँ।
इस भवसागर से तिर जाऊँ, मम मस्तक प्रभु चरण धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

‘अखिल’ विश्व के फल हैं अर्पित, आवागमन ना होवे नाथ।
शिव मन्दिर में वास करूँ नित, घरगृहस्थी का छूटे साथ॥
अपने दुःख से दुःखी रहा मैं, नहीं किसी का किंचित् दोष।
देव-शास्त्र-गुरु का आलम्बन, जग में देता सुख-संतोष॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टद्रव्य के सम्मिश्रण से, मैंने यह अर्घ्य बनाया है।
भक्तिभाव से आकर जिनवर, चरणन नाथ चढ़ाया है॥
मम राह कंटकाकीर्ण प्रभो, इसको निष्कण्टक बना सकूँ।
वह शक्ति मुझे दो दयानिधे, जिससे अनर्घ्यपद प्राप्त करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

देव शास्त्र गुरु कथन पर, करो पूर्ण श्रद्धान।

मिले शीघ्र ही परम पद, होवै निज कल्याण॥

जय वीतराग सर्वज्ञ नाथ, छूटे न कभी प्रभु चरण साथ ।
 तुम अष्टकर्म का किये नाश, अघ पूर्ण निराकुल हुए नाथ ॥
 हित का उपदेश दिया जिनवर, है यह संसार कहा नश्वर ।
 कर चार घातिया कर्म हनन, बतलाया आगम करो मनन ॥
 प्रभु छियालीस गुण के हो भण्डार, अतिशय की महिमा है अपार ।
 अष्टादश दोष किये अभाव, नहीं रखें किसी से बैर भाव ॥
 अतएव समर्पित है जीवन, अर्पित है मेरा नश्वर तन ।
 अब तो सन्मार्ग दिखाओ देव, विनती करता प्रभु चरण सेव ॥
 जिनकी ध्वनि है ओंकार रूप, नहीं इसमें कोई रंक भूप ।
 सब बैठ करें श्रुत का अभ्यास, तब सिद्धालय में होय वास ॥
 अज्ञान-अंधेरा करत दूर, क्रोधादि कषायें होत चूर ।
 है द्वादशांग वाणी अपार, जिनका नहीं पावै कोई पार ॥
 चंदन-सम शीतल जगत होय, दश अष्ट महा भाषा सुसोह ।
 यह सप्त भंग नहीं द्वंद्व फंद, सब कर्म नशावें मंद-मंद ॥
 जग का अँधियारा मिटत जात, अब राह सुगम जिनवाणी मात ।
 यह शीश नमत है बार-बार, परमागम का जब पढ़ें सार ॥
 जिनगुरु की महिमा है महान, जो नमन दिगम्बर करत ध्यान ।
 गज, मृग, सिंह विचरत चहूँ ओर, विप्लव फैलावें बैरी घोर ॥
 वे पंच महाव्रत धरें धीर, आतम मंथन कर हरैं पीर ।
 पूजें सब उनको भक्तिभाव, ढिंंग बैठ सुनैं सब धर्म चाव ॥
 वे काम क्रोध, भय करें त्याग, तब ही बुझ पाये राग-आग ।
 वन में रहते वैराग्य धार, भवसागर से लग जायें पार ॥
 विषयों की आशा से विरक्त, सब धन्य कहें बन जायें भक्त ।
 सुर-नर-किन्नर सब भूल द्वेष, ऐसा है गुरुवर तेरा वेष ॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देव-शास्त्र-गुरु को नमूँ, मैं पूजों धरि ध्यान ।

‘अखिल’ जगत के जीव सब, पावें पद निर्वाण ॥

(इति पुष्पांजलिं क्षिपेत्)